शोध पत्र- ललित कला

Dec.-09—Jan.-2010

हरियाणा की बौद्ध वास्तुकला (स्तूप)

* डॉ. राकेश कुमार सिंह

*असिस्टेंट प्रोफेसर, ललित कला विभाग, कुरूक्षेत्र विश्वविद्यालय, कुरुक्षेत्र (हरियाणा)

भारतवर्ष में प्रागैतिहासिक काल से कला का विशेष महत्व रहा है। कला को हर क्षेत्र में काफी सुन्दर एवं उचित ढंग से प्रकट किया गया है। जिनमें वास्तुकला, चित्रकला, नाट्यकला और संगीतकला भी है। वास्तुकला एवं अलंकार के रूप में बौद्ध स्तूप भी अहम भूमिका रखते हैं। स्तूप भगवान के तथा उनके निर्वाण का द्योतक है। स्तूप बनाने की प्रथा बुद्ध से भी पहले की मानी जाती है। किसी राजा अथवा विशेष व्यक्ति के मर्णोपरांत उनकी अस्थियों के साथ उनके जीवन की आवश्यक वस्तुओं को भी रखा जाता था तथा कई बार किसी राजा की अस्थियों के साथ–साथ उनके कुछ सेवकों को भी दफना दिया जाता था।

स्तूप के तीन भाग होते हैं– एक गोल आधार (प्रदक्षण पथ), अंडाकार मुख्य भाग तथा छतरी। स्तूप का निर्माण कुटिम या शिलाओं की नींव पर किया जाता था। चबूतरे के ऊपर बिछाए हुए शिलापट्टों पर आधे कटोरे की आकृति का या लम्बे गुम्बद की आकृति का एक थूहा (ढेर) बनया जाता था। जिसे अंड कहते थे। इसका संकेत इसी शब्द में निहीत है। आरम्भ में स्तूप के व्यास व उसकी ऊँचाई का अनुपात अपेक्षाकृत कम होता था पर क्रमशः उत्सेध या उच्छाय में वृद्धि होती गई और स्तूप आकार की तुलना में अंडे के समान ऊंचा होता गया। जब अंड ऊंचाई बढ़ती गई तब स्तूप के आकार की तुलना महाबुब्बल या पानी के बड़े बुलबुले से की जाने लगी। स्तूप की चोटी अपनी गोलाई पूरी न करके सिर पर कुपुटी बनाई जाती थी। उसी चपटे भाग पर स्तूप का सबसे महत्वपूर्ण भाग रहता था। जिसे हार्मिका कहते थे। हार्मिका का अर्थ है देवताओं का निवास स्थान या देवसपनस्तून के वास्तु की कल्पना में वह उसके धुलोक के समकक्ष हुआ। हार्मिका के बीच में एक यष्टि लगाई जाती थी। यष्टि का निचला भाग स्तूप के मस्तक में धातुर्गभ मंजूषा के ऊपर पिरोया रहता था और उसके ऊपरी सिरे पर तीन छत्र या छत्रावली लगाई जाती थी। सबसे ऊपर का एक अलग छत्र लगता है। इस प्रतीक की महानता के कई कारण लगाये जाते हैं। इसे एक युग का खजाना भी समझा जा सकता है। तीन छतरियों को ब्रह्माण्ड का प्रतीक समझा जाता है तथा बीच के खम्बे को ब्रह्माण्ड की धुरी का। कालान्तर में इन छत्रों की संख्या तीन से बढ़कर सात तक पहुँच गई थी। यष्टि या हार्मिका के चारों ओर छोटे खम्बों की एक वेदिका बनाई जाती थी। जिससे उस स्थान पर देव प्रभाव सूचित होता था। क्रमशः स्तूप के वास्तु विधान में विकास हुआ।

प्रमुख रूप में स्तूप के चारों ओर वेदिका की रचना हुई। वेदिका का स्वरूप जो हमें नायरण वाटक में भी मिलता है। यहां शिलाखण्डों की बनी हुई महती चकोर वेष्टिकी अभी तक सुरक्षित मिली है। वेदिका की मूल कल्पना निश्चय ही वेदिका थी। यज्ञों में वेदिस्थान के चारों ओर इस प्रकार की सीमा यूचक वेष्टिनी बनाई जाती थी। उसी से यज्ञ मण्डप या अग्निशाला का प्रमाण या विस्तार विदित होता था। इसी की अनुकृति पर प्रत्येक देवस्थान वेदिका से मंडित किया जाने लगा। इसी आधार पर चैत्यवृक्ष, धार्मिक स्तम्भ आयाग या पूजापट्ट बोधिमंड आदि के चारों ओर वेदिकाएं बनाई जाने लगी। इसी प्रकार से वेदिका धार्मिक स्थान का लक्षण व चिन्ह बन गई। बौद्ध स्तूपों में चारों ओर आरम्भ से ही काष्ठ वेष्टिनी या लकड़ी की वेदिकाएं होती थी। कालांतर में शिलामयी वेदिकाएं बनाई गई थी। स्तूप का संबंध प्रायः बौद्ध धर्म से ही माना जाता है इसकी कल्पना ऋग्वेद में भी पाई जाती है। वहां कल्पना के अनुसार सूर्य हिरण्य स्तूप है। जिसकी सुनहरी किरणें चारों ओर स्तूप के आकार से फैली हैं। किसी मूलभूत स्वर्ण के स्तूप की कल्पना जैन साहित्य में पाई जाती है। जैसे मथुरा के प्राचीन स्तूपों को देव निर्मित स्तूप कहा गया

है बुद्ध से भी पहले स्तूप का संबंध महापुरूषों से माना जाता था। उनके जीवन की कल्पना अग्नि स्कन्ध या अग्नि के ऊँचे जलते हुए रूप में की जाती थी। कहा जाता है कि सूर्य की सविता अग्नि का महान स्तूप है। इसे ब्रह्म की ज्योति माना जाता है। भगवान बुद्ध अपने ज्ञानमय प्रकाश के कारण अग्नि स्कन्ध बन गए थे और स्तूप के पूर्व में उनकी स्मृति या पूजा को उचित समझा जाता था।

बौद्ध ग्रंथों के अनुसार बुद्ध के महापरिनिर्वाण के पश्चात् अलग–अलग स्थानों पर दस स्तूप बनाए गए। उनमें से आठ स्तूप भगवान बुद्ध की अस्थियों के ऊपर बने हैं नौंवा स्तूप उस बर्तन पर बना है जिस पर अस्थियों को रखकर बांटा गया था दसवां स्तूप कुशीनगर से मिली भगवान बुद्ध की अस्थियों एवं राख पर बना था। सम्राट अशोक द्वारा सात शारीरिक स्तूपों से अस्थियों को निकालकर 84, 000 भागों में बांटा गया तथा एक विशाल राज्य में बौद्ध स्तूपों का निर्माण करवाया। अनुमान लगाया जाता है कि 84, 000 स्तूपों में छोटे स्मारक, स्तूपों को भी जोड़ा गया है। फिर भी इस बात में कोई शंका नहीं कि अशोक ने काफी संख्या में स्तूप बनवाए।

गुप्तकाल में आये चीनी यात्री ह्यूनसांग ने हरियाणा भी का भी भ्रमण किया तथा अपने लेख में हरियाणा में बने बौद्ध स्तूपों का भी वर्णन किया गया है। हरियाणा राज्य में चन्हेटी (जगाधरी), आदी बद्री, अमादलपुर (यमुनानगर), भादस, हथीन (पलवल), असंध, कुरुक्षेत्र, फतेहाबाद (मेवात), हग्रोहा (हिसार), झज्जर, अम्बाला, करनाल, रोहतक से बौद्ध मूर्तियां, स्तम्भ एवं अन्य अवशेष प्राप्त हुए हैं जो हरियाणा राज्य में उन्नत हुए बौद्ध धर्म का प्रमाण देते हैं।

सरस्वती नदी के किनारे हर्ष के टीले के उत्तर–पश्चिम में एक किलोमीटर की दूरी पर एक स्तूप एक बौद्ध विहार पाया गया था। यह स्तूप जमीन से छः फुट की ऊँचाई पर था इसके नजदीक एक छः वर्ग मीटर लम्बा चौड़ा एक टैंक था जो कि 33 x 23 x 7 से.मी. के नाप की पकाई हुई ईंटों से बना हुआ था। इन ईंटों की पैमाइश कुषाण कालीन ईंटों का नमूना है। इसके पास ही बौद्ध विहार के निशान भी पाये गये थे। यह कहना अब मुश्किल है कि चीनी यात्री ने जिस स्तूप और विहार का जिक्र किया है वे ये ही हैं या नहीं। उनके अवशेष भी अब यहाँ मौजूद नहीं हैं। एक दूसरा बौद्ध विहार जो हयूनसांग ने यहाँ पर पाया था वह कुरुक्षेत्र कैथल रेलवे लाईन व प्रसिद्ध संहित टैंक के बीच था। इस स्थान पर अब नई इमारत बन गई है। चीनी चात्री हयूनसांग थानेश्वर से उत्तर–पूर्व में 400 मी. की दूरी पर शूला किन आ पहुंचे जिसे अब सुध कहा जाता है। इस बात का विवरण पाणिनी के अष्टाध्यायी में, पतांजलि के महाभाष्य में, महामायूरी के श्लोक 23 व 60 में मौजूद हैं। सुघ्न जो कि यमुना नदी के पश्चिम में दाहिने किनारे पर स्थित है। इसकी सुघ गांव के रूप में पहचान कर ली गई है।

हयूनसांग ने सुध के बौद्ध अवशेषों की बहुत महत्वपूर्ण जानकारी दी है। राजधानी के दक्षिण–पूर्व में, विशाल बौद्धस्तूप विहार के पूर्वी दरवाजे के बाहर पश्चिम में एक अशोक स्तंभ था। जहां पर बुद्ध ने धर्म उपदेश दिया था यहां के लोगों को धर्म में दीक्षित किया था। इस सतम्भ के अतिरिक्त यहां पर एक दूसरा स्तम्भ भी था जिसमें बुद्ध के नख व बालों के अवशेष रखे गए थे। इस प्रकार के स्मारक स्तम्भ यहां थे जिनमें सारिपुत्र, गोदग्लायन व कई अन्य बड़े अवशेष रखे थे।

सारिपुत्र व गोदग्लायन का भगवान बुद्ध से पहले परिनिर्वाण हो चुका था इसलिए उनके शारीरिक अवशेषों पर पहले ही स्तूप बनने आरम्भ हो गये थे। भगवान बुद्ध के नख व बालों पर स्तूप बनाने का सिलसिला उनके जीवन काल में ही शुरू हो चुका था। सुध में बने स्मारक स्तूप, बौद्ध परम्परा के पहले से ही स्तूप बनाने की परम्परा के उदाहरण हैं। पिपराहवा से अंकित धातु कलश जैसा ही एक हाथी दांत का मनका सुध के टीले से मिला है जिसकी ऊँचाई 1 इन्च है। इसके अन्दर सफेद गाढ़ा पदार्थ था क्योंकि इस पर कुछ भी लिखा हुआ नहीं मिला है फिर भी यह अनुमान लगाया जाता है कि किसी महान बौद्ध भिक्षु के शारीरिक अवशेष इसमें रखे गये होंगे। यह भी हो सकता है कि जिस समय अस्थिकलश रखा जाता है उस समय लिखे जाने की प्रथा न हो कुछ विद्वानों का मत यह है कि पिपराहवा धातु कलश पर लिखी ब्राह्मी भाषा सबसे पुरानी लिखाई का नमूना है। धातु कलश की बनावट से इस बात का अनुमान लगाया जाता है कि यह प्रारम्भिक युग का बना है। सुघ से ही 21 मि.मी. x 7 मि.मी. का एक अस्थिकलश भी पाया गया। सुघ गांव के दक्षिण–पश्चिम में आयताकार कुषाणकालीन बुद्ध विहार पाया गया है, जिसकी लम्बाई 130 मीटर है तथा चौड़ाई 70 मीटर है यह लंबाई पूर्व–पश्चिम की तरफ है इसकी भव्य दीवारें खुदाई के समय 6 मीटर ऊँची थीं। यह बौद्ध मौर्य कालीन है कि इससे पहले का कहना कठिन है। मूल सर्वास्तिवादिन विनय तथा दिव्यावदान के अनुसार बुद्ध स्वयं सुध (जगाधरी) आये थे। यहां पर बुद्ध ने इन्द्र नामक ब्राह्मण को अपने ज्ञान से प्रभावित किया था। इन्द्र अपने आप को अधिक सुन्दर, यौवन व ज्ञानी समझता था। बुद्ध के ज्ञान से प्रभावित होकर उनका विषय बना।

चन्हेटीः–सुघ (जगाधरी) के उत्तर–पश्चिम में पांच किलोमीटर की दूरी पर बना है। यहां अशोक द्वारा निर्मित एक

बौद्ध स्तूप है जो कि हयूनसांग द्वारा बताये गये दस स्तूपों में से एक है। यहां से कनिघंम मौर्य कालीन सिक्के मिले हैं। शायद यह स्थान भी सुघ की 5 किलोमीटर (बीरू ली) की परिधि का ही हिस्सा है। चन्हेटी गांव के दक्षिण–पूर्व में ईंटों का एक विशाल स्तूप है जो कि बूडिया को जाने वाली सड़क पर मौजूद है। जिला रजिस्टर में इसे थेह 'टीला' लिखा था। इसकी ऊँचाई 28 मीटर तथा परिधी 180 मीटर है। इसमें लाल रंग की पकी हुई ईंटें इस्तेमाल की गई हैं। जिनकी पैमाईश 30 X 30 X 30 से. मीटर है।

ईंटों के इस टीले का आकार शाहपुर व तक्षिला के व धर्म राजिक स्तूप से मिलता है। स्तूप बनाने की विधि के अनुसार पहले स्तूप बनाया जाता था फिर इसके चारों तरफ लकड़ी की वेदिका (रेलिंग) लगाई जाती थी। यहां भी ईंटो के एक रद्दे के ऊपर दूसरा रद्दा छोटा होता जाता था और बनते–बनते एक अर्ध गोलाकार, उल्टे कटोरे की तरह अथवा पानी के बुलबुले की शक्ल का बन जाता था। इसी तरह की शक्ल इस स्तूप मे देखी जा सकती है। इस स्तूप में लगने वाली कोई बेदिका अभी तक नहीं मिली है। हो सकता है यह वेदिका लकड़ी की होगी, किसी ने इस पत्थर से नहीं बनाया होगा। स्तूप के अन्दर के भाग में भी ईंटे लगी है, जिसे पश्चिमी भाग से देखा जा सकता है। हो सकता है इस गोलाईनुमा स्थान पर भगवान बुद्ध की मूर्ति रखी गई हो। यहां के स्थानीय लोगों ने ही स्तूप की कुछ ईंटों को निकाल लिया है जिस कारण स्तूप का यह हिस्सा दिखाई देता है। यदि यह स्तूप नहीं होता तो इसके अन्दर लगी ईंटें विधि अनुसार नहीं लगी होती। इसके ऊपरी भाग में 1.5 मीटर तक मिट्टी भरी है। कारण साफ है यहां हार्मिका होगी जिस पर छत्तरावली लगी होगी। इस प्रकार हम पाते हैं इसका आकार, ईंटों का होना तथा ऊपर हार्मिका का होना आदि इस स्तूप के होने के ही प्रमाण हैं।

आदि बद्रीः—आदि बद्री में सरस्वती नदी के मैदान में बना बौद्ध स्तूप साबूत ईंटों तथा ईटों के टुकड़ों से बना है। स्तूप की परिधि 11 मीटर है। इसके बीच में 3X3 मी. की केन्द्रीय कोठरी है। इसमें लगी ईंटों का नाप 30 X 2 X 5 से. मी है। 22 अरदों में बनी अन्दर की दीवर की मोटाई 1.5 मीटर है। मसाले की जगह मिट्टी की पतली सतह का इस्तेमाल किया गया है। बाईस आसारों के बाद गोल पत्थरों का इस्तेमाल किया गया है उसके बाद मिट्टी की सतह है। छः आसारों तक पत्थर हैं। पत्थर 75 से.मी. की निचाई तक गड़े हुए हैं। स्तूप के केन्द्र से तीन तीलियां उत्तर, पश्चिम दिशा में बनी हैं। अभी हाल के पुरातात्विक उत्खनन से एक 24 धारियों वाले स्तूप का पता चला है। यह स्तूप कुशाण काल में निर्मित किया गया है। देखने में यह स्तूप कुशाण कालीन संघोल (जिला फतेहाबाद साहिब, पंजाब) के स्तूप से मिलता है। आकार में बेलनाकार इस स्तूप के तीन वृत्तीय घेरे हैं, जिनकी रचना ईंटों से की गई है। इनके बीच वाले भाग में नियमित अन्तराल पर कीलियां बनाई गई हैं।

संघायः—जगाधरी के दक्षिण पश्चिम में पच्चीस कि.मी. की दूरी पर सड़क के साथ संघाय ग्राम स्थित है। इस गांव के दक्षिण में 2 कि.मी. की दूरी पर एक प्राचीन टीला है जो कि भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण के अधीक्षक संजय कुमार मंजुल के अनुसार हरियाणा तथा पंजाब में मिले सभी बौद्ध स्तूपों से बड़ा है। इस टीले का उनके द्वारा सर्वेक्षण किये जाने पर उन्होंने पाया कि यह बौद्ध स्तूप कुशाण कालीन है और दूसरी ई. का होना चाहिए। इस सथान से मिले बर्तन भी दूसरी ई. के तथा स्तूप लगभग 10 एकड़ भूमि में फैला है। दक्षिण में टीले की ऊँचाई 20 से 25 कि.मी. है। किसानों ने टीले को काटकर अपने खेतों में मिला लिया है। पूर्व में यह टीला समतल है। सड़क से टीले तक के लगभग 2 कि.मी. रास्ते में लाल मिट्टी के बने टूटे बर्तन नजर आते हैं।

थानेश्वर (कुरुक्षेत्र):— गुप्तकाल के समय में आये चीनी यात्री फाहियान यमुना नदी के दोनों तरफ बौद्ध स्थलों के बने होने की बात लिखते हैं। इनमें से कुछ अशोक द्वारा निर्मित भी हो सकते हैं हयूनसांग अशोक द्वारा निर्मित स्तूपों के बारे में भी लिखते हैं। थानेश्वर के बारे में लिखते हुए वह कहता है कि शहर के उत्तर–पश्चिम 4 या 5 मी की दूरी पर अशोक राजा द्वारा बनवाया हुआ 300 फुट ऊँचा स्तूप है। इसमें लगी ईंटें लाल–पीले, चमकीले रंग की हैं जो रात को चमकती हैं। यह किसी विलक्षण पदार्थ की तरफ संकेत करती हैं। इसे शगुन भी मान सकते हैं। हयूनसांग इस तरह की बातों में विश्वास नहीं रखता था किन्तु इस स्तूप से यह चमकीली रोशनी जरूर निकलती थी ऐसा लगता है। अब थानेश्वर में उत्तर–पश्चिम में कोई स्तूप नहीं है किन्तु हयूनसांग के हिसाब से यह स्तूप सरस्वती नदी के ओजस घाट के पास होना चाहिए (जो सीढ़ियों पर पानी की तरफ जाती है) यहां पर अभी भी कई टीले दबे पड़े हैं तथा बड़ा टीला एक बौद्ध विहार रहा होगा। शहरीकरण के तेजी से बढ़ने के कारण बहुत परिवर्तन हुए हैं, भौगोलिक स्थिति भी काफी हद तक बदली है जिसके कारण कानिर्घम द्वारा देखा गया यह स्तूप भी अब वहां नहीं बचा है। सरस्वती नदी के किनारे हर्ष के टीले के उत्तर–पश्चिम में एक किलामीटर की दूरी पर एक स्तूप तथा एक बौद्ध विहार पाया गया था। यह स्तूप जमीन

से छः फुट ऊँचा था। इसके नजदीक एक छः वर्ग मीटर लम्बा चौड़ा एक टैंक था जो कि 33 X 2 X 37 से.मी. के नाप की पकाई हुई ईंटों से बना हुआ था। इन ईंटों की पैमाइश कुषाण कालीन ईंटों का नमुना है। इसके पास ही बौद्ध विहार के निशान भी पाये गये थे। यह कहना अब मुश्किल है कि चीनी यात्री ने जिस स्तूप और विहार का जिक्र किया है वे ये ही हैं या नहीं। उनके अवशेष भी अब यहां मौजूद नहीं हैं। एक दूसरा बौद्ध विहार जो हयूनसांग ने यहां पर पाया था वह कुरुक्षेत्र—कैथल रेवले लाईन व प्रसिद्ध सन्निहित सरोवर टैंक के बीच था। यहां से एक टेराकोटा में बना अस्थि कलश भी मिला था जिसे 1972 में तोड़ दिया गया था। उस स्थान पर अब नई इमारत बन गई है।

एक ओर कुषाण कालीन सतूप समान्य अस्पताल कुरुक्षेत्र के पास मौजूद था जिसे अब दुर्भाग्यवश वहां से हटा दिया गया है। इसके पास से कुषाण बाद के बर्तन पाये गये हैं। यहां 44 X 45 X 7.5, 44 X 55 X 7.5 , 12.5 X 10 X 7.5 से. मी. पैमाईश की ईंटों का इस्तमाल किया गया है। इन पैमाईशों से लगता है कि अलग—अलग समय पर इसकी मरम्मत का काम होता रहा है। कुरुक्षेत्र में ब्रह्मसरोवर के पश्चिम तट पर ललित कला विभाग के सामने उत्तर दिशा में एक स्तूप नुमा आकृति मिली है, जिसके चारों ओर भिक्षुओं के रहने के लिए विहारों जैसी संरचना भी मिली है। जो छोटी—छोटी लाल रंग की ईंटों से बने हैं, जिनमें साबुत ईंटों तथा ईंटों के टुकड़ों का प्रयोग किया गया है। यह स्तूपनुमा आकृति काफी क्षतिग्रस्त है जिस कारण हमें इसके अन्दर की स्थिति का पता चलता है कि यह अन्दर से भी पूरी तरह, विधि अनुसार ईंटों से भरी हुई है। इसकी आकृति अन्य स्तूपों की भांति पूरी तरह वृत्ताकार में नहीं है। यह दक्षिण दिशा में बाहर की तरफ निकली हुई है तथा दिवारें कौने लिये हुए हैं।

असंधः असंध (पुरानी असंधीवत) में कुशाण कालीन स्तूप के अवषेष मिले हैं। असंध का जिक्र ब्राहमआस सूत्रों तथा महाभारत में आता है। यह प्राचीन भारत का महत्वपूर्ण शहर रहा होगा। यहां पर एक विशाल टीला है जिसका अधिकतर भाग नये कस्बे के नीचे दबा जा रहा है। इसमें से धूसर वर्ण मृदभांड, पूर्व ऐतिहासिक चीनी मिट्टी के बर्तन तथा कुषाण कालीन सिक्के, ईंटे, सिक्के तथा मध्यकालीन अवशेष मिलते हैं। बौद्ध स्तूप के अवशेषों को स्थानीय लोग जरासन्द का किला कहते हैं। यह स्तूप कभी बहुत ऊँचा रहा होगा क्योंकि आज भी इसकी ऊँचाई 25 मीटर है। इसका अन्तरल भाग मिट्टी तथा टूटी हुई ईंटों से भरा हुआ है। गोल टीले का ऊपर का भाग पतला लम्बा है। इसके एक भाग में गोल दीवार के चौवालीस ईंटों के रद्दे दिखते हैं। देखने में यह स्तूप सारनाथ के धमेक स्तूप की तरह दिखता है। इसमें 13.5—14 X 8.5—9 X 2—2.5 ईंटों की पैमाईश की ईंटों का इस्तेमाल किया गया है। कुषाण कालीन बर्तन, सिक्के तथा अन्य अवशेष भी इस स्तूप के पास से मिले हैं।

रोहतकः— बुद्ध तथा बोधीसत्व की मूर्तियां बनने तथ मन्दिरों के बनाने की प्रथा के बावजूद बौद्धों के स्तूप बनाने का उत्साह कम नहीं हुआ। प्रारम्भिक कुषाण काल में हरियाणा में निश्चित रूप से स्तूप बनाने की कला को रोहतक के लालपुर से 24X12 से.मी. लाल चित्तीदार पत्थर में बने शिलाखण्ड से लगाया जा सकता है। इस कालात्मक शिलाखंड के पदक में अर्ध चन्द्राकार कमल की पृष्ठभूमि में एक स्तूप है। मेधी (आधार जिस पर स्तूप का अन्डाकार भाग टिकता है) में अंड जहां अलग होते हैं वह स्तूप की आधी ऊँचाई पर है तथा उस स्थान पर गोलाई में चारों तरफ छड़ों का घेरा बनाया गया है।

अमादलपुर (जिला यमुनानगर)ः— अमादलपुर (जिला यमुनानगर)ः— से प्राचीन स्मारक स्तूप प्राप्त हुए हैं। बौद्ध स्तूपों से पूर्व भी कब्र पर मोटाई कम तथा ऊँचाई ज्यादा वाली आकर्षित स्मारक बनाया जाता था। परन्तु बौद्ध धर्म में इस प्रथा को एक विशेष स्थान प्राप्त हुआ। जिस कारण छोटे—छोटे स्मारकों का स्थान बड़े—बड़े स्तूपों ने ले लिया। स्तूप पहले ईंटों से बनाए जाते थे और कुछ समय पश्चात् इन्हें बनाने के लिए पत्थर का भी प्रयोग किया जाने लगा।

सन्दर्भ ग्रन्थ

1. अहीर, डी.सी— पंजाब, हरियाणा ते हिमाचल प्रदेष विच बुद्ध
2. भारती— सांची का कलात्मक अध्ययन
3. सिंह, डॉ जान— गौतम बुद्ध का धर्म और दर्शन
4. सिंह, डॉ जान— बुद्ध भूमि हरियाणा
5. श्रोत्रिप, डॉ. शुकदेव— भारतीय कला गौरव
6. हांडा—देवेन्द्र—हरियाणा से बुद्ध अवशेष